16

शुकनासोपदेश-यौवनस्वभाव

इस पाठ में ''शुकनासोपदेश एवं समतिक्रामत्सु'' यहाँ से आरम्भ होकर 'तन्द्राप्रदा लक्ष्मी:' तक के अंग का वर्णन है। यहां शुकनास चन्द्रापीड़ को उपदेश देते है। वह युवास्वस्था के विकार सम्पत्ति का अहंकार इत्यादि बहुत से विषयों का चन्द्रापीड़ के प्रति उपदेश देता है। वह भाग यहां समालोच्य है।

उद्देश्य-

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे :

- बाणभट्ट की गद्यकाव्य रचना शैली को समझ पाने में;
- चन्द्रापीड के राज्याभिषेक वृतान्त को जान पाने में;
- यौवन का प्रभाव, लक्ष्मी का मद और अनर्थ परम्परा को समक्ष पाने में;
- सज्जन और दुर्जन के व्यवहार को व्याख्यापित कर पाने में;
- यहां पाठ में स्थित पदों के अन्वयार्थ को समझ पाने में और;
- दीर्घ पदों के समास को समझ पाने में।

16.1 मूलपाठ

एवं समतिक्रामत्सु केषुचिद् दिवसेषु राजा चन्द्रापीडस्य यौवराज्याभिषेकं चिकीर्षु:

टिप्पणी

प्रतीहारानुपकरणसम्भार संग्रहार्थमादिदेश। समुपस्थितयौवराज्याभिषेकंच तं कदाचिद्दर्शनार्थमागतमारूढविनयमपि विनीततरमिच्छन् कर्तुं शुकनासः सविस्तरमुवाच।

व्याख्या-

एवम् - पूर्वोक्तविधि से, दिवसेषु - दिनों को, समतिक्रामत्सु - व्यतीत करने में, राजा - नृप तारापीड-, चन्द्रापीडस्य - अपने पुत्र चन्द्रपीड के, यौवराज्याभिषेकम् - युवराज पद पर अभिषेक, चिकीर्षु - करने का इच्छुक, प्रतीहारान् - द्वारपालों को, उपकरण संभार संग्रहार्थम् - अभिषेक की साम्रगी के समूह को संग्रह करने के लिए, आदिदेश - आदेश दिया।

समुपस्थितयौवराज्याभिषेकं - सभी विद्यमान या उपस्थित यौवराज्य के अभिषेक को, तम् - उस, चन्द्रापीडम् - चन्द्रापीड को, कदाचित - किसी भी समय, दर्शनार्थम् - देखने के लिए, आगतम् - आये हुए, आरुढ़विनयम् - विनय से मुक्त, अपि भी -, विनिततरम् - अतिशय से विनय शीलता को, इच्छन् - चाहता हुआ, शुकनासः - राजा तारापीड का मन्त्री या प्रधान अमात्य, सविस्तारम् - विस्तार के साथ, उवाच - बोला।

सरलार्थ-

उचितकाल आने पर राजा तारापीड अपने पुत्र चन्द्रापीड को युवराज पद पर स्थपित करना चाहता था। अतः अभिषेक की सामग्री संग्रह करने का सेवकों को आदेश दिया। यौवराज्यभिषेक से पूर्व में शुकनास को देखने के लिए चन्द्रापीड गया। तब शुकनास ने चन्द्रापीड अतीव विनय सम्पन्न है, यह देखकर भी उसे विनय बढ़ाने के लिए विस्तार से कहा।

व्याकरणविमर्श-

क) समासः

1. यौवराज्याभिषेकम् - यौवराज्यस्य अभिषेकः यौवराज्याभिषेकः, तम् इति षष्ठीतत्पुषसमासः।
2. समुपस्थितयौवराज्याभिषेकम् - यौवरात्यस्य अभिषेकः यौवराज्याभिषेकः इति षष्ठीतत्पुषसमासः। समुपस्थितः यौवराज्याभिषेकः यस्य स समुपस्थितयौवराज्याभिषेकः, तं समुपस्थितयौवराज्याभिषेकम् इति बहुव्रीहिसमासः।
3. आरुढविनयम् - आरूढः विनयः यस्य स आरूढविनयः, तमिति बहुव्रीहिसमासः

ख) सन्धिविच्छेदः

समुपस्थितयौवराज्याभिषेकंच - समुपस्थितयौवराज्याभिषेकम्+ च।

कोशः -

1. ''राजा राट् पार्थिवक्ष्माभृन्नृपभूपमहीक्षितः।'' इत्यमरवचनात् राजन्-शब्दस्य राट्, पार्थिवः, क्ष्माभृत्, नृपः, भूपः, महीक्षित् इत्येते पर्यायाः।
2. ''प्रतीहारो द्वारपालद्वास्थद्वास्थितदर्शकाः।'' इत्यमरवचनात् प्रतीहारशब्दस्य द्वारपालः, द्वास्थः,

द्वास्थितः, दर्शकः इत्येते पर्यायाः। को नाम प्रतीहार इति चाणक्यसंग्रहे -

''इंगिताकारतत्त्वज्ञो बलवान् प्रियदर्शनः।
अप्रमादी सदा दक्षः प्रतीहारः स उच्यते।।'' इति।

पाठगतप्रश्न 16.1

1. चन्द्रापीड किसका पुत्र था?
2. कौन किसका यौवराज्याभिषेक करना चाहता था?
3. राजा ने उपकरण संग्रह के लिए किसे आदेश दिया?
4. चन्द्रापीड कब आया?
5. तारापीड के प्रधान मन्त्री का क्या नाम था?
6. शुकनास को किसलिए उपदेश दिया?
7. कादम्बरी कथा है या आख्यायिका?

16.2 मूलपाठ

''तात, चन्द्रापीड, विदितवेदितव्यस्य अधीतसर्वशास्त्रस्य ते नाल्पमप्युपदेष्टव्यमस्ति। केवलंच निसर्गत एव अभानुभेद्यमरत्नालोकोच्छेद्यम् अप्रदीपप्रभापनेयमतिगहनं तमो यौवनप्रभवम्। अपरिणमोपशमो दारुणो लक्ष्मीमदः। कष्टमनंजनवर्त्तिसाध्यमपरम् ऐश्वर्यतिमिरानधत्वम्। अशिशिरोपचारहायोऽतितीव्रो दर्पदाहत्वरोष्मा। सततममूलमन्त्रशम्यो विषमो विषयविषास्वादमोहः। नित्यमस्नानशौचवध्यो बलवान् रागमलावलेपः अजस्रमक्षपावसानप्रबोधा घोरा च राज्यसुखसन्निपातनिद्रा भवतीति, इत्यतः विस्तरेणाभिधीयसे।

व्याख्याः-

तत - पुत्र, चन्द्रापीड, विदित वेदितव्यस्य - जानने योग्य विषयों को जानने वाले, अधीतसर्वशास्त्रस्य - वेद पुराण आदि सभी शास्त्रों को पढ़ने वाले, ते - तुम्हारे लिए, अल्पम् - थोडा सा, अपि - भी, उपदेष्टव्यम् - उपदेश या कहने योग्य शास्त्रतत्व शेष, न अस्ति - नहीं है।

तर्हि - तो, उपदेश का आरम्भ, किमर्थ - किसलिए इस प्रश्न में उदय होता है तब कहते है।- केवलम् च - अर्थात् उपदेष्टव्यत्व के अभाव में भी उपदेश का प्रयोजन उत्पादन होता है। निसर्गतः- स्वभाव से ही, एव - ही, यौवन प्रभवम् - यौवन का प्रभाव जिसमें होता है। अर्थात् तारुण्योत्पन्न, तमः - अन्धकार अतिदुर्दमनीय, अभानुभेद्यम् - सूर्य से भी भेद्य नहीं, अरत्नालोकच्छेद्यम् - मणियों की कान्ति से भी दूर नहीं किया जाने वाला, अप्रदीपप्रभापनेयम्

टिप्पणी

– दीपक के प्रकाश या प्रभा से भी अपनेयम् – नहीं हटाया जाने वाला, अतिगहनम् – अत्यन्त गहनीय या दुर्दमनीय दुख का कारण होने से

लक्ष्मीमदः – लक्ष्मी धनसम्पत्ति के मद से उन्मत्त, अपरिणामोपशमः – अविद्यमान् परिणाम में, वृद्धावस्था में भी शान्त न होने वाला अर्थात् मादक पदार्थों के सेवन से होने वाला मद औषधादि से समय के साथ निवृत हो जाता है। परम् लक्ष्मीपद किसी भी प्रकार से निवृत नहीं होता, उसी प्रकार तारुण्य का मद जीवन के अन्त में भी स्थित रहता है। इसलिए अपरिणामोपशम कहा है। और वह, दारुण – भीषण है।

कष्टम् अनंजनवर्तिसाहयम् अपरम् ऐश्वर्यतिमिरान्धत्वम् – नितान्त दुखदायी काजल की सलाई से नहीं मिटने वाला अपरम् दूसरा धनसम्पति रुपी तिमिर से उत्पन्न होने वाला अन्धेरा है यहां अपरम् का अर्थ अन्धत्वरोग से भिन्न ऐश्वर्यातिमिरान्धत्वम् ऐश्वर्य सम्पद ही तिमिर है तिमिर संज्ञा नयनरोग की है, ऐश्वर्यतिमिर से अन्धत्व दर्शनशून्य होता है। अजंनवर्ति से साध्य अर्थात् नेत्रौषधि विशेष से निवारण विद्यमान है। अतः वह कष्ट या दुःख स्वरुप है। तिमिर नामक रोग तो अंजनवर्ती से उपशमित है। किन्तु वह नितान्त क्लेशकर होता है। तिमिर व्यधि से उत्पन्न दर्शन्शून्यत्व अंजनवर्ती आदि से निराकरण करने योग्य है। किन्तु सदसद् विवेक शून्यत्व रुप धनसम्पत्तितिमिरान्धत्व किसी प्रकार से निराकरण योग्य नहीं है। अतः दोनों में महान विषमता है। जैसा की अष्टाङ्गहृदय में कहा है–

रसेन्द्रभुजगौ तुल्यौ तयोस्तुल्यमथांजनम्।
ईषत्कर्पूर संयुक्तमंजनं तिमिरापहम्॥

अशिशिरोपचार हार्योऽतितीव्रो दर्पदाहज्वरोष्मा – चन्दन माला आदि शीतल कार्यकलापों से दूर नहीं किया जाने वाला अत्यन्त तीक्ष्ण सम्पत्ति के गर्व रुपी तेज बुखार की उष्णता है।, दर्प – सम्पत्ति का अहंकार या अभिमान ही दाहज्वर – तीव्रताप उसकी ऊष्मा उष्णत्व है, **अशिशिरोपचारहार्यः** – न शिशिरैः शीतल उपचार माला चन्दन आदि पदार्थ व्यापार से परिहार करने योग्य है। अत एव अतितीव्र है। अन्य प्रकार के ज्वर तो शीतलोपचार से निवारण योग्य होते है। परन्तु दर्पदाहज्वर की ऊष्मा का नहीं।

विषयिणाम्– आस्वादन करने वाले को, बध्नाति– बान्धता है वह विषय कहलाता है। स्रक्चन्दनवनितादि– पदार्थ विषय है वे ही अनर्थ के कारण होने से विष अर्थात् गरल है उनका जो आस्वादन या सम्भोग या उपयोग है उससे जो मोह या मूर्च्छा है वह विषय विषास्वादमोह कहलाता है। यह मूर्च्छा सतत अर्थात निरन्तर है तो अमूलमन्त्रगम्य है अर्थात् औषध मूल से मन्त्रों से और विषविनाश मन्त्रों से निवारण करने में शक्त अर्थात् समर्थ है उसके समान विषय अतीव तीव्र कठिन है जो निवारण करने में असमर्थ है।

रागमलावलेपः– राग विषयों की अभिलाषा है वह ही मल है उसके अवलेप को, अस्नानशौचवध्यः– न स्नान से, न मज्जन से, न शौच से, परिहार्य है वह नित्य एवं बलवान है। अन्य अवलेप स्नानादि से दूर हो सकते हैं किन्तु यह रागमलावलेव स्नानादि से दूर करने में समर्थ नहीं।

अजस्रमक्षपावसानप्रबोधाघोरा च राज्यसुखन्निपात निद्रा भवति इति, इत्यतः विस्तारेणमिधीयसे– राज्य के सुखानुभव स्वरुप सन्तिपात निद्रा ऐसी भयंकर होती है कि रात्रि के समाप्त होने पर

भी कभी चेतनता नहीं होती। अत: तुम्हें थोड़ा विस्तारपूर्वक कहता हूँ। राज्यसुख राष्ट्रशासन का आनन्द ही है, सन्निपातनिद्रा सुषुप्ति रुप है। रात्रि के अन्त मे प्रबोध अर्थात् जागरण होता है। अन्य इस निद्रा का निशा अन्त में जागरण होता है परन्तु राज्य सुख सन्निपातनिद्रा में तो प्रबोध अर्थात् जागरण नहीं होता अत: यह निद्रा अजस्र अर्थात् निरन्तर एवं भीषण होती है। अत: इसे विस्तार से कहना चाहिए।

सरलार्थ-

शुकनास चन्द्रापीड को कहता है कि चन्द्रापीड सभी शास्त्रों को पढ़ चुका है अत: उसके लिए उपदेश देने के लिए कुछ भी शेष नहीं है परन्तु युवा अवस्था में स्वभावत: ही जो तम अन्धकार उत्पन्न होता है उसे सूर्य भी विनाश करने में समर्थ नहीं है। प्रदीप अर्थात् दीपक का प्रकाश भी उसे दूर नहीं कर सकता। यह तम अतिगहन अतिशय दु:ख स्वरुप है।

धनसम्पत्ति का मद उपशमन योग्य नहीं है। मादक पदार्थो के सेवन से उत्पन्न मद औषधि आदि से समय के साथ नष्ट हो जाता है परन्तु लक्ष्मी का मद किसी प्रकार से नष्ट नहीं होता। ऐश्वर्य से जो अन्धत्व आता है उसका निकारण दुष्कर है। धन के अभिमान से उत्पन्न उष्णता है। उसका उपशमन चन्दनलेप आदि से भी नहीं होता, वह ऊष्णता अतितीव्र होती है। माला चन्दन और वनिता आदि से और विषय सम्भोग से जो मोह उत्पन्न होता है उस मोह का भी किसी औषधमूल या विनाशक मन्त्र से उपशमन नहीं होता। इस कारण वह मोह भी भयंकर है। विषयों में आसक्तिरुप मल का अवलेप गुरुतर है वह शुचिक्रिया से भी दूर करने में समर्थ नही होता।

राज्यसुख का जो अनुभव है वह महान निद्रा है अन्य प्रकार की निद्रा तो रात्रि की समाप्ति पर चली जाती है किन्तु वह निद्रा सरलता से नहीं जाती है। इस प्रकार से राज्य सुख, लक्ष्मी का मद और यौवन के मद का वर्णन शुकनास विस्तार से इन विषयों का वर्णन करते है।

व्याकरणविमर्श -

क) समास -

1. **विदितवेदितव्यस्य** - विदितं वेदितव्यं येन से इति बहुव्रीहिसमास:, तस्य विदितवेदितव्यस्य।
2. **अधीतसर्वशास्त्रस्य** - अधीतानि सर्वशास्त्राणि येन स इति बहुव्रीहिसमास:, तस्य अधीतसर्वशास्त्रस्य।
3. **अभानुभेद्यम्**- भानुना भेद्यं भानुभेद्यम् इति तृतीयातत्पुरुष:। न भानुद्यम् अभानुभेद्यम् इति नतंत्पुरुषसमास:।
4. **अरत्नालोकोच्छेद्यम्** - रत्नानाम् आलोक: रत्नालोक: इति षष्ठीतत्पुरुषसमास:। रत्नालोकेन उच्छेद्यं रत्नालोकोच्छेद्यम् इति तृतीयातत्पुरुषसमास:। न रत्नालोकोच्छेद्यम् अरत्नालोकोच्छेद्यम् इति नंतत्पुरुषसमास:।
5. **अप्रदीपप्रभापनेयम्** - प्रदीपस्य प्रभा प्रदीपप्रभा इति षष्ठीतत्पुरुष:। प्रदीपप्रभया अपनेयं प्रदीपप्रभापलेयम् इति तृतीयातत्पुरुष:। न प्रदीपप्रभापनेयम् अप्रदीपप्रभापनेयम् इति नंतत्पुरुष:।

टिप्पणी

6. **अक्षपावसानप्रबोधा** - क्षपाया: अवसानं क्षपावसानम् इति षष्ठीतत्पुरुष:। नास्ति क्षपावसाने प्रबोध: यस्यां सा अक्षपावसानप्रबोधा इति बहुव्रीहिसमास:।

ख) सन्धिविच्छेद -

1. **नाल्पमप्युपदेष्टव्यम्** - न+ अल्पमपि +उपदेष्टव्यम्।
2. **एवाभानुभेद्यम्** - एव + अभानुभेद्यम्।
3. **अशिशिरोपचारहार्योऽतितीव्र:** - अशिशिरोपचारहार्य: +अतितीव्र:।

अलंकार विमर्श :-

1. 'तात' वाक्य में काव्यलिंग अलंकार है। यहां उपदेष्टव्यत्वाभावम के प्रति विदित वेदितव्यस्य, अधीतसर्वशास्त्रस्य इन दो पदों के अर्थ का हेतु का वर्णन होने से काव्यलिंग है। उसका लक्षण है-

'हेतोर्वाक्यपदार्थत्वे काव्यलिंग निगद्यते'' इति।

2. 'केवलम् च इस वाक्य में अतिशयोक्ति, समुच्चय और काव्यलिंग इन तीन अलंकारों का अंग अंगी भाव होने से संकर अलंकार है। उसका लक्षण है -

'अंगांगित्वेडलंकृतीना तद्वदेकाश्रयस्थितौ।
सन्दिग्धत्वे च भवति संकररस्त्रिविध: पुन:॥

कोश:-

1. ''तातशब्दं प्रयुंजन्ति पूज्ये पितरि चात्मजे।'' इति नारदवचनात् तातशब्दस्य पूज्यार्थे जनकार्थे पुत्रार्थे च प्रयोगो भवति।
2. ''गहनं वनदु:खयो:। गह्वरं कलिले चाऽपि'' इति विश्वकाषात् गहनशब्दस्य वनार्थे दु:खार्थे च प्रयोगो भवति।

पाठगतप्रश्न 16.2

8. किसलिए चन्द्रापीड को उपदेश की आवश्यकता नहीं है?
9. यौवन दशा में उत्पन्न तम कैसा होता है?
10. धन से उत्पन्न नेत्र रोग कैसा है?
11. धन के अभिमान रुप से उत्पन्न उष्णता कैसी है?
12. स्रग्गादि विषय सम्भोग से उत्पन्न मोह कैसा है?

टिप्पणी

13. अरत्नालोकेच्छद्यम् - का विग्रह और समास लिखें?

14. नाल्पमप्युपदेष्टव्यम्'' का सन्धि विच्छेद कीजिए।

16.3 मूलपाठ

गर्भेश्वरत्वमभिनवयौवनत्वमप्रतिमरूपत्वममानुषशक्तित्वंचेति महतीयं खलु अनर्थपरम्परा सर्वा। अविनयानामेकैकम् अप्येषामायतनम्, किमुत समवायः। यौवनारम्भे च प्रायः शास्त्रजलप्रक्षालननिर्म्मलापि कालुष्यमुपयाति बुद्धिः। अनुज्झितधवलतापि सरागैव भवति यूनां दृष्टिः। अपहरति च वात्येव शुष्कपत्रम् समुद्भूतरजोभ्रान्तरतिदूरम् आत्मेच्छया यौवनसमये पुरुषं प्रकृतिः। इन्द्रियहरिणहारिणी च सततमतिदुरन्तेयम् उपभोगमृगतृष्णिका नवयौवनकषायितात्मनश्च सलिलानीव तान्येव विषयस्वरूपाण्यास्वाद्यमानानि मधुरतराण्यापतन्ति मनसः। नाशयति च दिंमोह इवोन्मार्गप्रवर्त्तकः पुरुषमत्यासंगो विषयेषु।

व्याख्याः-

गर्भेश्वरत्वम् -गर्भ या शैशव अवस्था से ही ईश्वर व धनशाली प्रभुत्व, अभिनवयौवनत्वम् - नवीन यौवन है जिसका अभिनवयौवन उसका भाव, अप्रतिमरुपत्वम् - अद्वितीय रुप सौन्दर्य है जिसका अप्रतिमरुप उसका भाव, अमानुशक्तिम् - अमानवी या अलौकिक शक्ति या शारीरिकसामर्थ्य है जिसका उसका भाव, इयम् - यह वर्ण्यमान, महती - महान या गसीयसी, अनर्थ परम्परा - अनिष्टकारी परम्परा सभी के मत से है। जैसा कि नारायण पण्डित रचित हितोपदेश में कहा है-

यौवनं धनसम्पत्तिः प्रभुत्वभविवेकिता।
एकैकमप्यनर्थाय किमु यत्र चतुष्ट्यम्॥

इस समय वर्णित गर्भेश्वरत्वादी के मध्य में एक एक भी अविनयों और दुश्चेष्टाओं का घर या स्थान है, समवाय चतुष्ट्य समूह रुप है, तो कहना ही क्या है। अर्थात् ये सभी विनाश के कारण है।

यौवनारम्भे-युवावस्था के आरम्भ में शास्त्रों के जल से प्रक्षालन करने पर भी कुलषता ही प्राप्त होती है। अर्थात् आन्वीक्षिकी आदि विद्या रुप जल से निर्मल होने पर भी इनकी बुद्धि बहुश कालुस्यता को प्राप्त कर लेती है। ?

अनुज्झितधवलतापि सरागैव भवति न्यूना दृष्टिः-अनुज्झित अर्थात् अत्यक्ता धवल या शुक्लता है जिससे वैसी भी तरुणों की दृष्टि सौन्दर्य आदि में अनुरागसहित ही होती है।

यौवनसमये- युवावस्था के समय में समुद्भूत रजोभ्रान्तिः - रजोगुण से उत्पन्न भ्रान्ति अर्थात् मनुष्य के स्वभाव में भ्रम उत्पन्न करता है। वायु अर्थात् आंधी जैसे धूलि को उड़ाकर ले जाती है। उसी प्रकार वह प्रकृति या स्वभाव मनुष्य को इच्छानुसार अगम्यस्थान पर खीच ले जाती है। इन्द्रियाणी - इन्द्रिय रुपी हरिणों को हरने वाली यह विषय भोग रुपी मृगतृष्णा परिणाम में सदा दुःख देने वाली है। हरिणों का सूर्य की किरणों से तप्त बालुका में जलबुद्धि होने से दौड़ने वाले के समान पुरुषों की भी विषयभोगतृष्णा से दुष्परिणामदायी होता है।

टिप्पणी

नवयौवनकषायितात्मन - नवयौवन से कषायित अर्थात् विकृत आत्मा स्वरुप है, जिसका उसके समान मन को वे ही पूर्वानुभूति होती है। अर्थात् कषाय रसयुक्त जिह्वा से जल वैसा मधुर नहीं होने पर भी जिस प्रकार अत्यन्त मधुर प्रतीत होता है। उसी प्रकार नवयौवन के वशीभूत काम क्रोध आदि से युक्त चित में कामिनी कांचन आदि प्रसिद्ध सब योग्य वस्तु अनुभूतमान होने पर आपातत बहुत ही मधुर प्रतीत होती है।

जिस प्रकार दिग्भ्रम मनुष्य को विपरीत मार्ग में ले जाकर नष्ट कर देता है। माला कांचनादि भोग्य पदार्थ में अत्यन्त आसक्ति भी उसी प्रकार मनुष्य को कुमार्ग में ले जाकर विनष्ट कर देती है।

सरलार्थ-

गर्भवास काल से ही प्रभुत्व नवीन युवावस्था, अद्वितीयरूप सौन्दर्य और अलौकिक शक्ति, अनिष्ट के महान मूल है। इनमें से एक एक भी अविनय का निवास स्थान है समूहरूप में हो तो कहना ही क्या है। यौवन के प्रारम्भ में बुद्धि शास्त्ररुपी जल से निर्मल होने पर भी कलुषता को प्राप्त होती है। युवकों की दृष्टि राग से युक्त होती है। यौवनकाल में रजोगुण के कारण लोगों के स्वभाव में भ्रम उत्पन्न करती है। कुमार्ग में ले जाने वाली होती है। विषयों में अति आसक्ति होती है। इन्द्रियरुप मृग के समान सदैव हरण करके दूर ले जाती है। नवयौवन के कारण धन स्त्री आदि योग्य वस्तुओं का आस्वादन मधुर मानते है। धन स्त्री आदि में आसक्ति भी मनुष्यों को कुमार्ग पर चलाकर विनाश करती है। ये सभी त्याज्य है यही शुकनास का तात्पर्य है।

व्याकरणविमर्श-

क) समासः -

1. **शास्त्रजलप्रक्षाननिर्म्मला** - शास्त्रमेव जलं शास्त्रजलम् इति कर्मधारयसमासः। तेन प्रशालनं शास्त्रजलप्रशालनमिति तृतीया-तत्पुरुषसमासः। शास्त्रजलप्रक्षालनेन निर्म्मला शास्त्रजलप्रक्षालन-निर्म्मला इति तृतीयातत्पुरुषसमासः।
2. **अनुज्झितधवलता** - न उज्झिता अनुज्झिता इति नंतत्पुरुषः। अनुज्झिता धवलता यथा सा अनुज्झितधवलता इति तृतीयातत्पुरुषसमासः।
3. **नवयौवनकषायितात्मनः** - नवयौवनेन कषायितः नवयौवनकषायितः इति तृतीयातत्पुरुषसमासः। नवयौवनकषायितः आत्मा यस्य सः नवयौवनकषायितात्मा इति बहुव्रीहिसमासः, तस्य नवयौवनकषायितात्मनः।

ख) सन्धिविच्छेदः -

1. अमानुषशक्तित्वच्च - अमानुषशक्तित्वम् +च।
2. खल्वनर्थपरम्परा - खलु+ अन्वर्थपरम्परा।
3. एकैकमप्येषाम् - एकैकम् +अपि+ एषाम्।

अलंकार विमर्श -

1. **गर्भेश्वरत्वादि हेतुओं के साथ हेतुमत:** कार्य का विपत्ति का अभेद वर्णन के कारण हेतु अलंकार है। उसका लक्षण साहित्य दर्पण में -' अभेदेनामिधा हेतुर्हेतोर्हेतुमता सह''
2. शस्त्रमेव जलम् - में रुपक है उसका लक्षण साहित्य दर्पण में रुपकं ''रुपितारोपाद्विषये निरपहवे''
3. शास्त्रजल से निर्मल होने पर भी कालुष्य प्राप्ति विरुद्ध प्रतीत होते है। अत: विरोधालंकार है उसका लक्षण-'' विरुद्धमिव भासेत विरोध:''।
4. रुपक और विरोध का अङ्गा-अङ्गीभाव होने से संकर अलंकार है।
5. उपमेय विषयस्वरूप से उपमान सलिलानि का वैद्यर्म्य साम्य कथन से उपमा अलंकार है उसका लक्षण साहित्यदर्पण में-''साम्यं वाच्यमवैद्यर्म्य वाक्यैक्य उपमा द्वयो:''।

कोश-

1. ''स्वादुप्रियौ च मधुरौ'' इत्यमरवचनात् स्वाद्वर्थक: मधुरशब्द:।
2. ''आप: स्त्री भूम्नि वार्वारि सलिलं कमलं जलम्।'' इत्याद्यमरवचनात् सलिलस्य आप: वा: वारि, कमलम्, जलम् इत्यादय: पर्यायशब्दा:।

पाठगत प्रश्न 16.3

15. महान अनर्थपरम्परा क्या है?
16. किस में आसक्ति मनुष्यों को कुमार्ग पर चलाकर नष्ट करती है?
17. अनुज्झितधवलता का विग्रह और समास लिखिए।
18. खल्वनर्थपरम्परा का सन्धिविच्छेद कीजिए।
19. रजसाम् पद में विभक्ति और अर्थ लिखिए।

16.4 मूलपाठ

भवादृशा एव भवन्ति भाजनान्युपदेशानाम्। अपगतमले हि मनसि स्फटिकमणाविव रजनिकरगभस्तयो विशन्ति सुखेनोपदेशगुणा:। गुरुवचनममलमपि सलिलमिव महदुपजनयति श्रवणस्थितं शूलमभव्यस्य। इतरस्य तु करिण इव शंखाभरणमाननशोभासमुदयमधिकतरमुपजनयति। हरति च अतिमलिनमन्धकारमिव दोषजातं प्रदोषसमयनिशाकर इव। गुरूपदेश: प्रशमहेतुर्वय:परिणाम इव पलितरूपेण शिरसिजजालममलीकुर्वन् गुणरूपेण तदेव परिणमयति।

टिप्पणी

व्याख्या -

भवादृशाः - आप जैसे ही, एव- ही, उपदेशानाम् - शिक्षा के, भजनानि- पात्र, भवन्ति- होते है, नान्ये - अन्य नहीं। क्योंकि निर्मल स्फटिक मणि में चन्द्र किरणों की भाँति निर्मल मन में उपदेशों के गुण आसानी से प्रवेश कर जाते हैं। अर्थात् सूर्यकान्त मणि में चन्द्रमा के समान, अपगतमले - अंश विषय आदिरूप मल के चले जाने पर मन में या चित्त में उपदेश के गुण सुख से या अनायास ही प्रवेश करते हैं।

गुरु के हित अहित का ज्ञान कराने वाले उपदेश वाक्य कल्याणकारी होने पर भी अशिष्ट जनों के कान में स्थित जल के समान महान् शूल या पीडा को उत्पन्न करता है। इससे भिन्न शिष्ट जनों को गुरु के वचन हाथी के शंख से बना हुआ, शंखाभरण मुख के सौन्दर्य की वृद्धि को और भी अधिक बढ़ाता है। अर्थात् कान में स्थित शांखालंकार से जैसे हाथी के मुख की शोभा है वैसे ही गुरु के वचनों से साधु के मुख की शोभा व हर्ष को देती है।

गुरु का वाक्य प्रदोष समय का चन्द्रमा अर्थात् सूर्यास्त के बाद के समय का चन्द्रमा अतिमलिनम् - बहुत गहन या अधिक तमोगुणी, अंधकारमिव - अंधेरे के समान, दोषजातम् - दोषों के समूह को हरता है। प्रशमहेतुः - अन्तःकरण की वृत्तियों की शान्ति का कारण, वयःपरिणमः - अवस्था की परिणति अर्थात् बुढापा, फलितरुपेण - श्वेत रंग में, शिरसिज जालम् - बालों के समूह को, अमलीनकुर्वन - निर्मल बनाता हुआ। मूलरुप में परिणत कर देता है।

प्रशमहेतुः- अर्थात् कामादि विकार की शान्ति के कारणभूत गुरु का उपदेश जिस प्रकार वृद्धावस्था केशों को निर्मल करती हुई क्रम से शुल्क रुप में परिणत कर देता है। उसी प्रकार अन्तरिन्द्रिय दमन के कारण गुरु का उपदेश भी उन काम क्रोध आदि दोषों को निर्मल करता हुआ क्रमशः दयादाक्षिण्यादि गुण स्वरुप में परिणत कर देता है।

सरलार्थ-

आप ही उपदेश ग्रहण के योग्य हो। जिस प्रकार निर्मल स्फटिक मणि में चन्द्रकिरण सरलता से प्रवेश करती है। वैसे ही आप भी निर्मल चित्त सत्व गुण प्रधानता के कारण से आप उपदेशों को सम्यक्रूप से जान सकते हैं परन्तु सज्जनों के वचनों में समान रुचि नहीं होती। जैसे निर्मल जल जीवन देता है परन्तु वह कान मे प्रवेश करके पीडा को ही पैदा करता है। वैसे ही यह अमृतवाणी दुर्जनों के कर्णपीड़ा को उत्पन्न करता है। शंखावली से जैसे गज के मुख की शोभा बढ़ती है। उसी प्रकार गुरुओं के वचनों से सज्जनों के मुख की शोभा बढ़ती है। रात्रि के आरम्भ में चन्द्रकिरण से जैसे अन्धेरे का पलायन होता है। उसी प्रकार गुरु के वचनों से कामक्रोधादि समूह का हरण होता है। वृद्धावस्था मे केश सफेद हो जाते हैं। उस शुक्लता से केश स्वच्छ प्रतीत होते है। उसी प्रकार शान्ति के हेतु गुरुवचन से मनुष्य निर्मल होकर सद्गुणों से उसी प्रकार सम्पूर्णता से परिणत होता है।

व्याकरणविमर्श-

क) समासः -

1. **रजनिकरगभस्तयः** - रजनिकरस्य गभस्तयः रजनिकरगभस्तयः इति षष्ठीतत्पुषसमासः।
2. **शिरसिजजालम्** - शिरसि जातं शिरसिजम् इति उपपदतत्पुरुष-समासः। शिरसिजस्य जालं शिरसिजजालमिति षष्ठीतत्पुरुषसमासः।
3. **आननशोभासमुदयम्** - आननस्य शोभा आननशोभा इति षष्ठीतत्पुरुषः। तस्याः समुदयः आनन्दशोभासमुदयः, तम् इति षष्ठीतत्पुरुषसमासः।
4. **प्रदोषसमयनिशाकरः** - प्रदोषसमये निशाकरः प्रदोषसमयनिशाकरः इति सप्तमीतत्पुरुषसमासः।

ख) सन्धिविच्छेदः-

1. स्फटिकमणाविव - स्फटिकमणौ+ इव।
2. सुखेनोपदेशगुणाः - सुखेन +उपदेशगुणाः।
3. हरत्यतिमलिनम् - हरति+ अतिमलिनम्।
4. प्रशमहेतुर्वयःपरिणाम इव - प्रशमहेतुः +वयःपरिणामः+ इव।

अलंकार विमर्श-

1. मनसि उपमेय के साथ स्फटिमणौ इस उपमान का अवैधर्म्य का साम्य कथन से उपमा अलंकार है।
2. गुरुवचन इस उपमेय के साथ सलिलम् इस उपमान का अवैधर्म्य साम्य कथन से उपमा है।
3. इतरस्य इस उपमेय के साथ करिण इस उपमान का अवैधर्म्य साम्यकथन से उपमा है।
4. इसी प्रकार हरति का गुरुपदेश से साम्य होने पर उपमा है।

कोश -

1. ''किरणोऽमयूखांशुगभस्तिघृणिरश्मयः।'' इत्यमरवचनाद् किरणम्, उग्रः, मयूखः, अंशुः, गभस्तिः, घृणिः, रश्मिः इत्येते समार्थकाः।
2. ''प्रदोषो रजनीमुखम्'' इत्यमरवचनात् रजनीमुखम् इति प्रदोषसमार्थकः।

पाठगत प्रश्न 16.4

20. कैसे मन में सुख से उपदेश प्रवेश करते हैं?
21. क्या अमल है?

टिप्पणी

22. कैसे निशाकर दोष का हरण करता है?

23. निशाकर कैसे दोष का हरण करता है?

24. सर्वव्याधिप्रशमन् का हेतु कौन है?

16.5 मूलपाठ

अयमेव चानास्वादित-विषय-रसस्य ते काल उपदेशस्य। कुसुमशर शर-प्रहारजर्जरिते हि हृदये जलमिव गलत्युपदिष्टम्। अकारणञ्च भवति दुष्प्रकृतेरन्वयः श्रुतं चाविनयस्य। चन्दप्रभवो न दहति किमनलः? किंवा प्रशमहेतुनापि न प्रचण्डतरीभवति वडवानलो वारिणा? गुरूपदेशश्च नाम पुरुषाणामखिलमलप्रक्षालनक्षममजलस्नानम्, अनुपजातपलितादिवैरूप्यमजरं वृद्धत्वम्, अनारोपितमेदोदोषं गुरूकरणम्, असुवर्णविरचनमग्राम्यं कर्णाभरणम्, अतीतज्योतिरालोकः, नोद्वेगकरः प्रजागरः। विशेषेणतु राज्ञाम्। विरला हि तेषामुपदेष्टारः। प्रतिशब्दक इव राजवचनमनुगच्छति जनो भयात्। उद्दामदर्पश्वयथुस्थगितश्रवणविवराश्चोपदिश्यमानमपि ते न शृण्वान्ति। श्रृण्वन्तोऽपि च गजनिमीलितेनावधीरयन्तः खेदयन्ति हितोपदेशदायिनो गुरून्। अहंकार-दाहज्वर-मूर्च्छान्धकारिता विह्वाला। हि राजप्रकृतिः, अलीकाभिमानोन्मादकारीशि धनानि, राज्यविषविकार-तन्द्राप्रदा राजलक्ष्मीः।

अयमेव- यह ही अनास्वादितविषयरसस्य- अनास्वादितविषयरस का, अर्थात् अनुभूत विषयों रुप शब्दों आदि के रस का जिसने आस्वादन नहीं किया है। ते काल उपदेशस्य-ऐसे तुम्हारे जैसे ही उपदेश के योग्य है। क्योंकि जिसने विषयों के रस का उपयोग कर लिया ऐसे पुरुष के लिए उपदेश सफलता उत्पन्न नहीं करते।

क्योंकि कुसुमशर शर-प्रहारजर्जरिते हि हृदय- जिस कारण से पुष्पबाणवाले कामदेव के इन बाणों के प्रहार से जर्जित हृदय वाले होते हैं, जलमिव गलत्युपदिष्टम्- उनके हृदय पर गुरु उपदेश जल समान बह जाता है।

अकारणं च भवति दुंष्कृतेन्वयः श्रुतं चातिनयस्य - अर्थात् दुष्य विनयरहित पुरुष का अच्छे वंश या कुल में जन्म होना, और शास्त्रों के श्रवण भी सत्कर्माचरण का कारण नहीं होता जैसा कि हितोपदेश में कहा गया है।

''न धर्मशास्त्रं पठतीति कारणम् न चाऽपि वेदाऽध्ययनं दुरात्मनः।
स्वभाव एवाऽत्र तथाऽतिरिच्यते यथां प्रकृत्या मधुरं गवां पयः।।''इति।

कवि उक्त अर्थ का समर्थन करता है - चन्द्र न प्रभव अर्थात् दुश्चरित्र लोगों की अच्छे कुल में उत्पत्ति तथा शास्त्र ज्ञान सन्मार्ग प्रवृत्ति का कारण नहीं होता। क्या चन्दन की लकडी से उत्पन्न आग नहीं जलाती? शान्ति कारक समुद्र के जल से भी क्या बडवानल अत्यन्त प्रचंड होकर उठता नहीं है। इस प्रकार शास्त्राज्ञान विनय का कारण नहीं है। गुरु के उपदेश की बहुत प्रशंसा होती है। पुरुशाणामखिलमलप्रक्षालनक्षममजलस्नानम्- गुरु का उपदेश तो मनुष्यों के लिए बिना जल का स्नान है। जो उनके समस्त काम क्रोध आदि मलो को धो देने में समर्थ है, स्नान तो जल के साथ होता है। किन्तु यह स्नान जल रहित होने से विशेष है।

टिप्पणी

अनुपजातपलितादिवैरूप्यमजरं वृद्धत्वम-यह वह स्थविरता है जिसमें श्वेत केश आदि कोई शारीरिक विकार उत्पन्न नहीं होता और बुढ़ापे से रहित वृद्धत्व का भाव है। गुरु के उपदेश से उस प्रकार का वृद्धत्व होता है। जहां पलितादि विरूप जरा आदि नहीं होते। जैसा कि भगवान मनु ने मनुसहिंता में कहा है -

न तेन वृद्धो भवति येनाऽस्य पलितं शिरः।
यो वै युवाडप्यधीयानस्तं देवाः स्थविरं विदुः॥

गुरू का उपदेश पृथुलता आदि को उत्पन्न करने वाले मेदा दोष से रहित गौरव को बढ़ाने वाला है। अन्यत्र गुरुता में मेदा (चर्बी) दोष होता है। किन्तु गुरु के उपदेश में इस प्रकार का दोष नहीं होता है।

असुवर्णविरचनमग्राम्यं कर्णाभरणम -गुरु का उपदेश कान का सुन्दर आभूषण है किन्तु सुवर्ण निर्मित नहीं है। बिना सुवर्ण निर्मित अग्राम्य। ग्राम्यभण्डादिवाक्यातिरिक्त अतिरमणीय है। अर्थात् गुरु का उपदेश सुवर्ण सघंट रहित होने पर भी विदग्धा के कारण अतिरमणीय है।

अतीतज्योतिरालोक-यह एक ऐसा प्रकाश है। जिसमें ज्वाला नहीं है। अर्थात् गुरु का उपदेश अतीव ज्योति है जिससे उस प्रकार का प्रकाश या ज्वाला नहीं है। गुरुपदेश सर्वप्रकाश अपूर्व अन्तज्योति होती है।

नोद्वेगकरः प्रजागरः-यह गुरु का उपदेश बिना उद्वेग अर्थात् चित्त में व्याकुलता को उत्पन्न किये बिना जागरण है। अन्य जागरण में तो चित्त व्याकुल होता है। इस गुरु के उपदेश के जागरण में व्याकुलता नहीं होती।

विशेषेण राज्ञाम्-यह सत् विशेषतया राजाओं के लिए होता है। क्योंकि वह तन्तद्गुणविशिष्ट होता है क्योंकि विरला हि तेषामुपदेष्टारः-उन राजाओं को उपदेश देने वाले विरले अर्थात कम होते हैं। प्रायः सभी राजाओं के निर्देशों का ही पालन करते है। अतः उपदेशक कम होते है। प्रतिशब्दक इव राजवचनमनुगच्छति जनो भयात्- लोग भय के कारण राजवचनों का भुवपरिमापित प्रतिशब्दश के समान उनका अनुसरण ही करते है।

उद्दामदर्पश्वयथुस्थगितश्रवणविवराश्चोपदिश्यमानमपि ते न शृण्वन्ति -उद्दाम या विस्तृत दर्प अहंकार या गर्व के कारण सूजन से कानों के छिद्र बन्द हो जाते है। अतः राजाओं को उपदेश देने पर भी वे उसे नहीं सुनते है। अर्थात् सुनने योग्य वचनों को भी नहीं स्वीकार करते है। वे राजा लोग कदाचित सुनते भी है तो हाथी के समान आंखे बन्द कर उस उपदेश का तिरस्कार करते हुए उन हितोपदेश देने वाले गुरुजनों को दुःखित करते रहते हैं। क्योंकि राजाओं का स्वभाव अहंकाररूपी दाहज्वर जनित मूर्च्छा से विवेक हीन होकर एक बार मे ही विह्वल हो जाता है। विशेषतः धन सम्पत्ति मिथ्या अभिमान से उन्मत कर देती है। और राजलक्ष्मी राज्य रुपी विष के विकार से सुस्ती उत्पन्न कर देती है।

सरलार्थ-

भोग भोग से शान्त नहीं होता है। अतः चन्द्रापीड ने आज भी शब्दस्पर्शदि भोगों का भोग नहीं किया है। इसलिए उपदेश के लिए यह उचित समय है। क्योंकि विषयासक्त हृदय में उपदेश

टिप्पणी

जल के समान बह जाता है। अर्थात् सत्य का प्रभाव विस्तृत नहीं होता है। जैसे अग्निजल से शान्त होती है। उसी प्रकार कामदेव के कामबाण दग्ध हृदय को शान्त करने के लिए उपदेशरुपी जल का सिंचन करते हैं परन्तु जो दुष्टस्वभाव सम्पन्न होते हैं और जिनमें विनय नहीं होता है। उन में शास्त्र श्रवण से मन की शान्ति होती है। चन्दन काष्ठ से उत्पन्न अग्नि क्या नहीं जलती है। जल से अग्नि शान्त होती है। परन्तु बडवानल अग्नि क्या जल से शान्त होती है। अर्थात् नहीं। अपितु पूर्व की अपेक्षा प्रबल ही होती है। स्नानकाल में जल से शरीरस्थ मल का प्रक्षालन होता है। गुरु का उपदेश तो सर्वविध मानसिक मलिनता का प्रक्षालन करता है। वह बिना जल के स्नान है। और भी गुरु के उपदेश से जहां केश विरुप नहीं होते है। वैसा वृद्धभाव है सुवर्णनिर्मिति का अभाव होने पर भी रम्य, आलोक से भी अधिक प्रकाशवान, अनुद्वेग कारक जागरण है। यह उपदेश राजाओं के लिए हितकारक है। क्योंकि राजाओं को उपदेश देने वाले थोड़े ही होते है। अधिकांश तो राजाओं के आज्ञा के पालक होते हैं। केवल अहंकार युक्त राजा उपदेश को स्वीकार नहीं करते है। वे अहंकारी धनरत्नादि में अभिमानी होते है। इस कारण उनकी राजलक्ष्मी राज्य को हानि ही प्रदान करती है। अतः चन्द्रापीड विषयासक्त न होकर गुरुदेश को सुनकर राज्य का पालन करें। उससे राज्य की राजलक्ष्मी प्रसन्न होती हुई अभ्युन्नति को धारण करती है।

व्याकरणविमर्श-

क) समास -

1. **अनास्वादितविषयरसस्य** - न आस्वादितः अनास्वादितः इति नतंत्पुरुषः। विषयस्य रसः विषयरसः इति षष्ठीतत्पुरुषः। अनास्वादितः विषयरसः येनः सः अनास्वादितविषयरसः इति बहुव्रीहिसमासः, तस्य अनास्वादितविषयरसस्य।

2. **कुसुमशरशरजर्जरिते** - कुसुमशरस्य शरः कुसुमशरशरः इति षष्ठीतत्पुरुषः। तेन जर्जरिते कुसुमशरशरजर्जरिते इति तृतीयातत्पुरुषः।

3. **उद्दामदर्पाश्वयथुस्थगितश्रवणविवराः** - उद्दामा दर्पा उद्दामदर्पा इति कर्मधारयसमासः, उद्दामदर्पा एव अश्वयथवः उद्दामदर्पाश्वयथवः इति कर्माधारयसमासः, तैः स्थगितानि श्रवणविवराणि येषां ते उद्दामदर्पाश्वयथुस्थगितरवणविवराः इति बहुव्रीहिसमासः।

4. **अहड-क्रारदाहज्वरमूर्च्छान्धकारिता** - अहडार एव दाहज्वरः अहडारदाहज्वरः इति कर्मधारयः। तेन मूर्च्छा अहडारदाहज्वरमूर्च्छा इति तृतीयातत्पुरुषः। तया अन्धकारिता अहडारदाहज्वरमूर्च्छान्धि-कारिता इति तृतीयातत्पुरुषः।

ख) सन्धिविच्छेद -

1. **गलत्युपदिष्टम्** -गलति+ उपदिष्टम्।

2. **अकारणचं** - आकारणम् +च।

3. **अतीतज्योतिरालोकः** - अतीतज्योतिः +आलोकः।

अलंकार विमर्श -

1. यहां उपदिष्टम् इस उपमेय से जलम् इस उपमान का अवैधर्म्य की साम्य कथन से उपमा अलंकार है।

2. गुरुपदेश रूप उपमेय में स्नानादि उपमानों का वैशिष्ट आरुढ़ होने के कारण अधिकाररुढ वैशिष्ट्यरुपक अलंकार है। उसका लक्षण साहित्यदर्पण में -अधिकाररुढवैशिष्ट्यं रुपकं यत्तदेव तत्''

कोश -

1. ''दन्ती दन्तावलो हस्ती द्विरदोऽनेकपो द्विपः।

   मतंगजो गजो नागः कुचंरो वारणः करी।।'' इत्यमरवचनात् गजशब्दस्य दन्ती, दन्तावलः, हस्ती, द्विरदः, अनेकपः, द्विपः, मतडजः, नागः, कुजंरः, वारणः, करी इत्येते पर्यायाः।

2. ''विश्वमशेषं कृत्स्नं समस्तनिखिलाखिलानि निःशेषम्।

   स्मग्रं सकलं पूर्णमखण्डं स्यादनूनके।।'' इत्यमरवचनात् अनूनकम्, विश्वम्, अशेषम्, कृत्स्नम्, समस्तम्, निखिलम्, अखिलम्, निःशेषम्, समग्रम्, सकलम्, पूर्णम्, अखण्डम् अत्येते पर्यायवाचकाः शब्दाः।

पाठगत प्रश्न 16.5

25. गुरु के उपदेश से कैसा हृदय शान्त होता है?

26. गुरुपदेश किनके लिए अकारण होता है?

27. गुरुपदेश से कैसा वृद्धत्व होता है?

28. यह उपदेश विशेषकर किनके लिए उपयुक्त है?

29. राज प्रकृति कैसी है?

30. अहंकारी राजा की राजलक्ष्मी कैसी है?

पाठसार

गुरुओं की आज्ञा विचारणीय होती है। गुरुपदेश नदी में केवट के समान होता है। उसका उपदेश ही सर्वदा और सर्वथा हमारा रक्षक है। उज्जयिनी के राजा तारापीड अपने पुत्र चन्द्रापीड का यौवराज्याभिषेक करना चाहता है। अतः वह सेवकों को सामग्री संग्रह के लिए आदेश देता है। चन्द्रापीड यौवराज्याभिषेक से पूर्व में प्रधानामात्य शुकनास के साथ साक्षात्कार करने के लिए गये। तब राज्यशासन के लिए उपयुक्त विनयी चन्द्रापीड को विनयतर बनाने के लिए शुकनास उपदेश देता है।

योग्य गुणविशिष्ट ही चन्द्रापीड युवराजपद पर अभिषेक के लिए उपयुक्त है। परन्तु सत्वगुण में भी यौवन के कारण और धनादि प्रभाव के कारण तम-अहंकार अभिमान आदि आ जाते है। उनमें अविवेक और मदमतता उत्पन्न हो जाते हैं। उससे लोग अशास्त्रीय नीतिविरुद्ध मार्ग पर प्रवृत हो जाते है। धन के प्रभाव से जो अभिमान रुप ज्वर होता है। वह औषधि से भी दूर नहीं होता। वनिता आदि विषय के संसर्ग से जो आसक्ति होती है। वह दुरपनेया होती है। राज्यप्राप्ति के बाद बहुत से राजा अपने आपको सर्वेश्वर मानते हैं। वे भोग निद्रा से उठने में असमर्थ होते हैं। इस प्रकार राज्यप्राप्ति के बाद चन्द्रापीड तुम इस प्रकार नहीं करो इसे बताने के लिए शुकनास ने धन के प्रभाव को कहा है।

गर्भेश्वर, अभिनवयौवन, अप्रतिम रुप, अमानुषशक्ति ये चार अनर्थ के मूलकारण है। इनमें से एक ही मानव को नीचे गिराने में समर्थ है। उनका समुदाय होने पर तो विनाश निश्चय है। यौवन के आरम्भ में बुद्धि भ्रमित हो जाती है। तीव्र वायु जैसे शुष्कपत्र को बहुत दूर तक ले जाती है। उसी प्रकार इन्द्रियां बुद्धि को बहुत दूर ले जाती है। धन युवती आदि विषयों में चित्त अत्यन्त आकृष्ट होता है। इन में लगा हुआ चित किसी अन्य को नहीं चाहता है। उससे राजाओं का बल प्रतिदिन क्षीण होता है। इनके दुष्प्रभाव वर्णन से इनमें आसक्ति नहीं करनी चाहिए। यह चन्द्रापीड को शुकनाम से उपदेश दिया।

निर्मलमणि में जैसें चन्द्रकिरण सीधे प्रवेश करती है। उसी प्रकार चन्द्रपीड आदि शुद्धचित वालों के हृदय में गुरु का उपदेश अच्छे से प्रवेश करता है। कुछ लोगों से साधु वस्तु भी कहीं पर दु:ख के लिए होती है। जैसे जल जीवन देने वाला है। परन्तु कान में प्रवेश करके पीडा उत्पन्न करता है। इसी प्रकार दुर्जनों के समीप में गुरुपदेश क्लेश प्रदान करता है। चन्द्र के प्रकाश से तम वैसे ही दूर होता है। जैसे गुरुपदेश से लोभ मोह आदि दोष दूर होते हैं। अच्छे राजा वो होते है। हितोपदेशों को सुनते हैं। गुरुपदेश जल के बिना स्नान होता है। उससे मन निर्मल होता है। गुरुपदेश ही आनन्ददायक और रम्य होता है। गुरुपदेश सुनने से सज्जनों का मन प्रसन्न होता है।

अहंकार से युक्त व्यक्ति हितोपदेश को नहीं सुनते और तिरस्कार करते हैं। विषय भोग से विनाश को प्राप्त होते हैं। उनकी राज्यलक्ष्मी रात दिन उसको नीचे गिरा कर, उनके राज्य को हानि होती है। उससे श्रिय स्वभाव जानकर साधु स्मरण करके अपने कर्म में परिवर्तन करना चाहिए। गुरु का आशिष और उनके उपदेश से राजाओं की विपत्ति दूर होती है। उसके बाद गुरुओं के आदेशों और उपदेश का निरन्तर पालन करना चाहिए यह प्रधानामात्य शुकनास का राजकुमार चन्द्रापीड को उपदेश दिया।

आपने क्या सीखा

- बाणभट्ट की गद्यकाव्य रचनाशैली को जाना।
- चन्द्रापीड़ के राज्याभिषेक वृतान्त को जाना।
- योवन प्रभाव, लक्ष्मीमद की अनर्थ परम्परा को जाना।
- सज्जन दुर्जन व्यवहार को जाना।

पाठान्त प्रश्न

1. गुरुओं की आज्ञा ही विचारणीय है - व्याख्या कीजिए।
2. धनातिशय भोग कब नहीं करना चाहिए स्पष्ट कीजिए।
3. गुरू में श्रद्धा और अनुकरण कहाँ अपेक्षित है?
4. किस के लिए गुरुपदेश है अन्य के लिए नहीं?
5. गुरुओं के आदेश की उपेक्षा करने वालों की अवस्था का वर्णन कीजिए।
6. किन चारों विषयों से मनुष्यों का विनाश होता है?
7. कैसे गुरुओं के उपदेशानुसार राज्य का पालन करना चाहिए?
8. गुरूपदेश विशेषकर राजाओं के प्रति कहां उपयुक्त है। प्रतिपादन कीजिए।
9. यौवनकाल में लोगों को स्वभाव में किसलिए भ्रांति होती है?
10. कादम्बरी का परिचय दीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

16.1

01. चन्द्रापीड तारापीड का पुत्र है।
02. राजा तारापीड चन्द्रपीड का यौवराज्यभिषेक करना चाहते थे।
03. राजा ने उपकरण संग्रह के लिए प्रतिहारों को आदेश दिया।
04. चन्द्रापीड यौवराज्याभिषेक से पूर्व आया।
05. तारापीड के प्रधानमन्त्री शुकनास थे।
06. शुकनास आरुढ़विनय चन्द्रापीड को विनीततर करने के लिए उपदेश दिया।
07. कादम्बरी एक कथा ग्रन्थ है।

16.2

08. उसके द्वारा सभी शास्त्रों को पढ़ व जान लिया था इसलिए उपदेश की आवश्यकता नहीं है।

09. यौवनदशा में उत्पन्न तम सूर्ये अभेद्य, रत्नप्रकाश से अद्देय, दीपप्रभा से अकार्य अतिगहन है।

10. धन से उत्पन्न नेत्ररोग अजंनवर्ति से निवारण योग्य नहीं।

11. धन के अभियान से उत्पन्न उष्णता अशिशिरोपचारहार्या है।

12. स्रग्गादि विषय सम्भोग उत्पन्न मोह अमूलमन्त्रगम्य है।

13. **रत्नानाम् आलोक** - रत्नालोक: षष्ठीतत्पुरुष।

रत्नालोकेन उच्छेद्य - रत्नालोकोच्छेद्यम् तृतीयतत्पुरुष।

न रत्नालोकोच्छेद्यम - अरत्नालोकोच्छेद्यम् नंतत्पुरुष।

14. ''न+अल्पमपि+उपदेष्टव्यम्''

16.3

15. गर्भ से ईश्वरत्व, अभिनवयौवन, अप्रतिमरूपत्व, और अमानुषशक्ति ये महान अर्थ की परम्परा है।

16. माला चन्दन और वनिता में आसक्ति मनुष्य को कुमार्ग पर चलाकर नष्ट करती है।

17. न उज्झिता - अनुज्झिता - नञ् तत्पुरुष। अनुज्झिता धवलता यथासाअनुज्झितधवलता - बहुव्रीहि

18. खलु+अनर्थपरम्परा।

19. रजसाम् - रजोगुणों का, षष्ठी विभक्ति।

16.4

20. अपगतमल मन में सुख से उपदेश प्रवेश करता है।

21. गुरु का वचन अमल है।

22. प्रदोष के समय निशाकर दोष का हरण करता है।

23. निशाकर अतिमलिन अन्धकार के समान दोष को हरण करता है।

24. सर्वव्याधिप्रशमन का कारण गुरु का उपदेश है।

टिप्पणी

16.5

25. गुरुपदेश से कामबाणजर्जरित हृदय शान्त होता है।

26. गुरुपदेश दुष्प्रकृति के लिए अकारण होता है।

27. गुरुपदेश से अनुपजातपलितादि वैरुप्यजरवृद्धत्व होता है।

28. गुरुपदेश विशेषकर राजाओं के लिए उपयुक्त है।

29. अहकारं दाह ज्वर मूर्च्छान्धकारि और विह्वल राज की प्रकृति होती है।

30. अहंकारी राजा राज्य विषविकारतन्द्रा देने वाली राजलक्ष्मी होती है।